अग्निकर्म

अग्नि अथवा ऊष्मा का रोगों के निवारणार्थ प्रयोग करना अग्निकर्म चिकित्सा कहलाता है। अग्निकर्म हेतु अग्निकर्म शलाका अथवा अन्य पदार्थों को अग्नि पर तप्त कर उनसे दहन किया जाता है।

पिछले कुछ वर्षों में जैसे-जैसे विज्ञान की उन्नति हुई, इस विधि का विकास हुआ एवं कई नये प्रकार के उपकरण प्रयोग में आने लगे। जैसे electric cautery, diathermy cautery. इनमें विद्युत द्वारा शलाका को तप्त किया जाता है। आजकल Laser rays द्वारा भी दहन किया जाता है।

अग्निकर्म की प्रधानता (Superiority of Agni karma)

क्षारादग्निर्गरीयान् क्रियासु व्याख्यातः, तद्दग्धानां रोगाणाम-पुनर्भावाद् भेषजशस्त्रक्षारैरसाध्यानां तत्साध्यत्वाच्च।

(सु. सू. 12/3)

अग्निकर्म को क्षारकर्म से श्रेष्ठ माना गया है, क्योंकि :

- अग्निकर्म द्वारा चिकित्सा करने पर वह रोग पुनः नहीं होता है।
- जो रोग औषधि, शस्त्र, क्षार के प्रयोग से ठीक नहीं हो पाते हैं, वे अग्निकर्म चिकिसा द्वारा ठीक हो जाते हैं।

दहन उपकरण (Instruments for cauterization)

तत्र पिप्पल्यजाशकृद्गोदन्तशरशलाकास्त्वग्गतानां, जाम्ब-वौष्ठेतरलौहाः मांसगतानां, क्षौद्रगुडस्नेहाः सिरास्नायुसंध्य-स्थिगतानाम्। (सु.सू. 12/4)

आचार्य सुश्रुत ने पिप्पली, अजाशकृत् (बकरी की मिंगनी), गोदन्त, शर, शलाका, जाम्बवौष्ठ, इतर लौह (लौह, ताम्र, रजत आदि), मधु, गुड़, स्नेह आदि को दहन उपकरणों में माना है।

भिन्न-भिन्न रोगों में निम्न उपकरणों का प्रयोग किया जाता है :

- **त्वचा के रोगों में :** पिप्पली, अजाशकृत्, गोदन्त, शर, शलाका इत्यादि का प्रयोग किया जाता है।
- **मांस रोगों में :** जाम्बवौष्ठ, इतर लौह (लौह, ताम्र, रजत आदि) का प्रयोग किया जाता है।
- **सिरा, स्नायु, संधि एवं अस्थिगत रोगों में :** मधु, गुड़, स्नेह का प्रयोग किया जाता है।

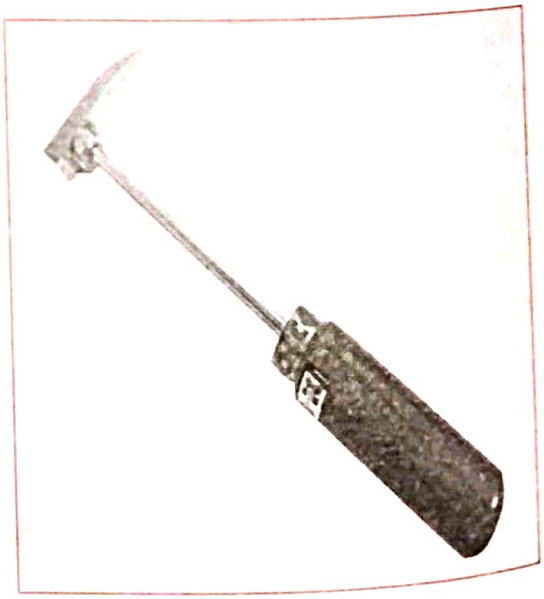

Fig. 10.1 : अग्निकर्म शलाका

आचार्य वाग्भट (अ.ह.) ने पिचुवर्ति, सूर्यकान्त और मोम को भी दहन उपकरण माना है। वृद्ध वाग्भट (अं.सं.) ने सूची,

स्वर्ण, रजत, ताम्र, कांस्य, सूर्यकान्त, घृत व वसा की गणना दहन उपकरणों में की है।

आचार्य चक्रदत्त ने स्वर्ण शलाका का प्रयोग पक्ष्मरोगों की चिकित्सा हेतु बताया है तथा योगरत्नाकर में अपानमार्ग पिटिका (Boil at perineum) का दहन स्वर्ण शलाका से करने का निर्देश किया है।

दहन उपकरणों पर विचार करने से यह प्रतीत होता है कि आचार्य सुश्रुत ने विस्तृत जानकारी के आधार पर इनका चयन किया है। उदाहरणार्थ एक ही तापमान वाले जल एवं घृत का शरीर ऊतकों (tissues) पर उनका प्रभाव भिन्न-भिन्न होगा, क्योंकि घृत में गुप्त ऊष्मा (Latent heat) जल से अधिक होती है। इसी प्रकार पिप्पली, अजाशकृत्, गोदन्त, शर, शलाका, जाम्बवौष्ठ, मधु, गुड़, स्नेह इत्यादि की गुप्त ऊष्मा (Latent heat) भिन्न-भिन्न होगी और इनका ऊतकों पर प्रभाव भी भिन्न-भिन्न होगा। अतः चिकित्सक को स्थान विशेष एवं गुप्त ऊष्मा का विचार कर दहन उपकरण का चयन करना चाहिए।

आजकल उपलब्ध उपकरणों में इस सुविधा हेतु नियन्त्रक (Regulator) लगे होते हैं एवं उनके द्वारा ऊष्मा (Heat) का नियन्त्रण कर अलग-अलग स्थानों पर आवश्यक प्रभाव प्राप्त किया जाता है।

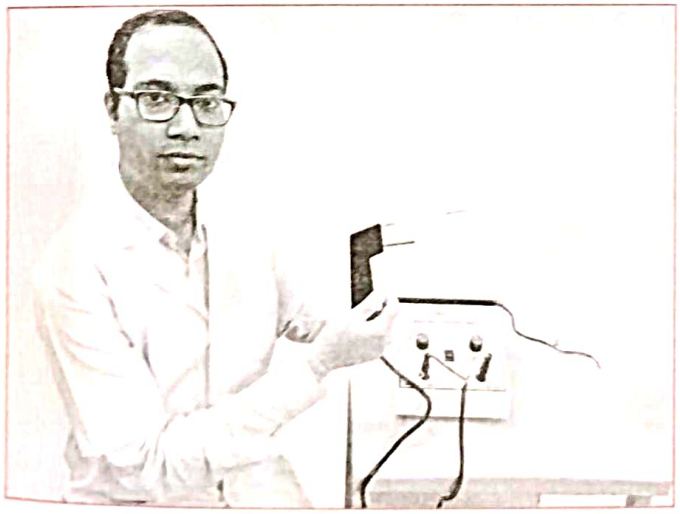

Fig. 10.2 : Thermal cautery machine

दहन प्रकार (Pattern of cauterization)

आचार्य सुश्रुत ने रक्त तप्त शलाका द्वारा रोगी के शरीर पर दहन करने हेतु जो आकृति बनाई जाती है, उन्हें दहन प्रकार कहा है।

तत्र वलय-विन्दु-विलेखा-प्रतिसारणानीति दहनविशेषाः।

(सु. सू. 12/11)

- आचार्य सुश्रुत ने दहन के **चार** प्रकार बताये हैं।

1. **वलय** : तप्त शलाका द्वारा व्याधि के मूल में वृत्ताकार चिह्न बनाकर दग्ध किया जाता है।
2. **बिन्दु** : बिन्दु (····) के समान दग्ध किया जाता है।
3. **विलेखा** : तप्त शलाका द्वारा तिर्य्यक्, ऋजु, वक्र आदि कई प्रकार से रेखाएँ बनाकर दग्ध किया जाता है।
4. **प्रतिसारण** : तप्त शलाका द्वारा रुग्ण स्थान पर घर्षण करके दग्ध किया जाता है।

- आचार्य वाग्भट ने उपरोक्त प्रकारों के अतिरिक्त निम्न तीन प्रकार अधिक बताये हैं।

5. **अर्धचन्द्र** : तप्त शलाका द्वारा रुग्ण स्थान पर अर्धचन्द्राकार चिह्न बनाकर दग्ध किया जाता है।
6. **स्वस्तिक** : तप्त शलाका द्वारा रुग्ण स्थान पर स्वास्तिका- कार चिह्न बनाकर दग्ध किया जाता है।
7. **अष्टापद** : तप्त शलाका द्वारा रुग्ण स्थान पर अष्टापद चिह्न बनाकर दग्ध किया जाता है।

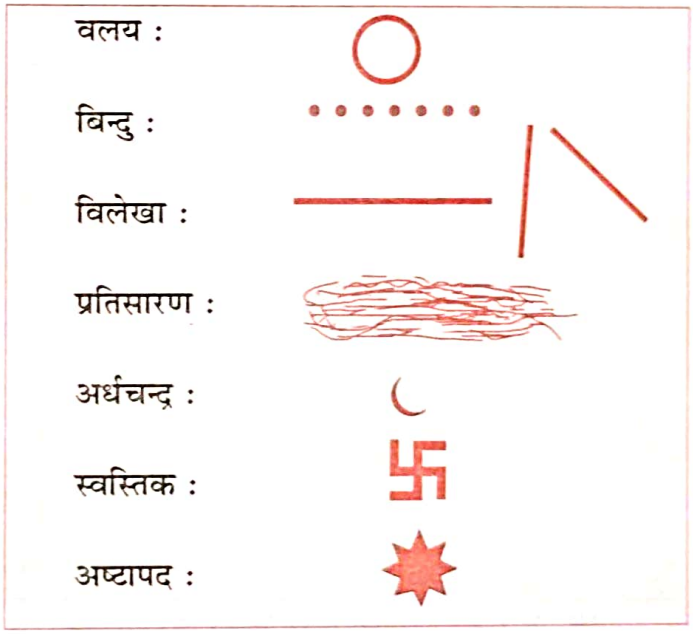

Fig. 10.3 : दहन के प्रकार

दहन विधि (Procedure of cauterization)

तत्राग्निकर्म सर्वर्तुषु कुर्यादन्यत्र शरद्ग्रीष्माभ्यां; तत्राप्यात्ययिकेऽग्निकर्मसाध्ये व्याधौ तत्प्रत्यनीकं विधिं कृत्वा।

(सु.सू. 12/5)

अग्निकर्म हेतु उपयुक्त ऋतु (Suitable season for Agnikarma): प्रायः अग्निकर्म सभी ऋतुओं में किया जा सकता है, परन्तु शरद एवं ग्रीष्म ऋतुओं में अग्निकर्म का निषेध है। इन ऋतुओं (शरद एवं ग्रीष्म) में भी आपातकालीन परिस्थितियों (emergency conditions) में अग्निकर्म किया जा सकता है, इस हेतु ऋतु के विपरीत आहार-विहार व॰ व्यवस्था कर अर्थात् शीतता में शीत का प्रतिकार एवं उष्णता में उष्ण का प्रतिकार करके अग्निकर्म करना चाहिए। उदाहरण के तौर पर यदि

अग्निकर्म ग्रीष्म ऋतु में किया जा रहा है तो वातानुकूलित कक्ष air conditioned room) तथा शीत प्रलेप के द्वारा उष्णता के प्रभाव को कम किया जा सकता है।

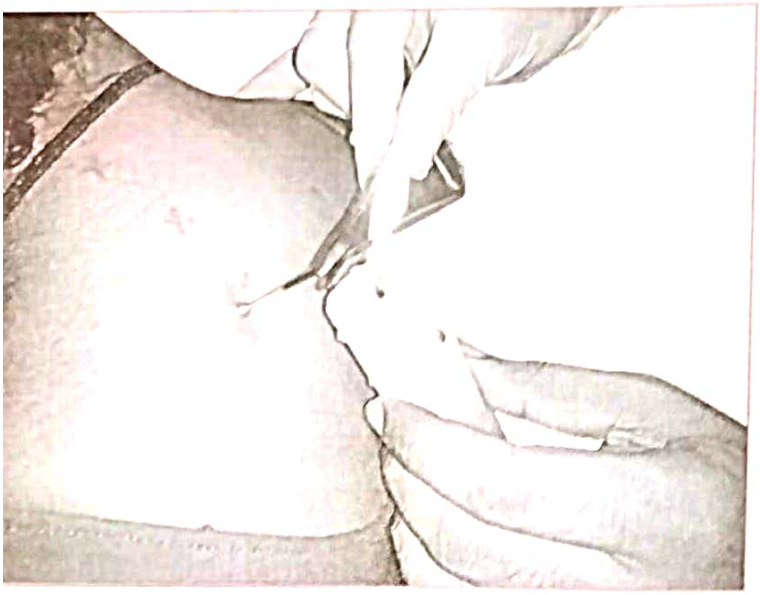

Fig. 10.4 : स्वर्ण शलाका द्वारा अग्निकर्म
(in cervical spondylosis)

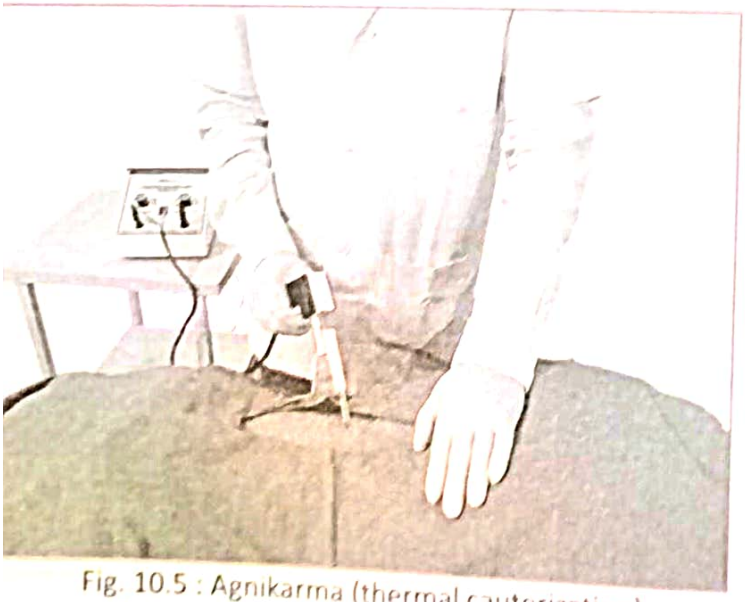

Fig. 10.5 : Agnikarma (thermal cauterization)
in backache (PIVD with radiculopathy)

सर्वव्याधिष्वृतुषु च पिच्छिलमन्नं भुक्तवतः; मूढगर्भाश्मरी-भगन्दरोदरार्शोमुखरोगेष्वभुक्तवतः कर्म कुर्वीत। (सु.सू. 12/6)

सभी ऋतुओं में रोगी को **पिच्छिल अन्न** खिलाने के पश्चात् ही अग्निकर्म करना चाहिए, क्योंकि अग्नि रूक्ष होती है, परन्तु अश्मरी, अर्श, भगन्दर, मुख रोगों में रोगी को बिना भोजन कराये ही अग्निकर्म करना चाहिए।

रोगी को पूर्व दिशा की ओर बैठाकर अथवा लेटाकर अग्निकर्म करना चाहिए।

अग्निकर्म करने के पश्चात् उत्पन्न व्रण पर मधु और घृत का प्रयोग करना चाहिए।

धातुगत सम्यक् दग्ध के लक्षण

- **त्वक् दग्ध :**

  तत्र शब्द प्रादुर्भावो दुर्गन्धता त्वक्संकोचश्च त्वग्दग्धे।
  (सु. सू. 12/8)

त्वचा में दग्ध होने पर चिट चिट ध्वनि से शब्दोत्पत्ति होती है एवं त्वचा में संकोच (Contraction) तथा दुर्गन्धि (Bad odour) आती है।

- **मांस दग्ध**

  कपोतवर्णता ऽल्पश्वयथुवेदना शुष्क संकुचितव्रणत्व मांसदग्धे। (सु. सू. 12/8)

दग्ध स्थान पर कबूतर के समान वर्ण एवं वेदना होती है तथा अल्प शोफ उत्पन्न होता है एवं व्रण शुष्क एवं संकुचित हो जाता है।

- **सिरा और स्नायु में दग्ध :**

  कृष्णोन्नतव्रणता स्रावसन्निरोधश्च सिरास्नायुदग्धे।
  (सु. सू. 12/8)

सिरा एवं स्नायु में दग्ध होने पर व्रण कृष्ण वर्ण युक्त एवं उभरा हुआ होता है तथा रुधिरादि स्राव बन्द हो जाते हैं।

- **सन्धि और अस्थि में दग्ध :**

  रुक्षारुणता कर्कशस्थिर- व्रणता च सन्ध्यस्थिदग्धे।
  (सु. सू. 12/8)

सन्धि और अस्थि में दग्ध होने पर व्रण रूक्ष, अरुण वर्ण युक्त एवं कर्कश (खुरदरा तथा कठिन) हो जाता है।

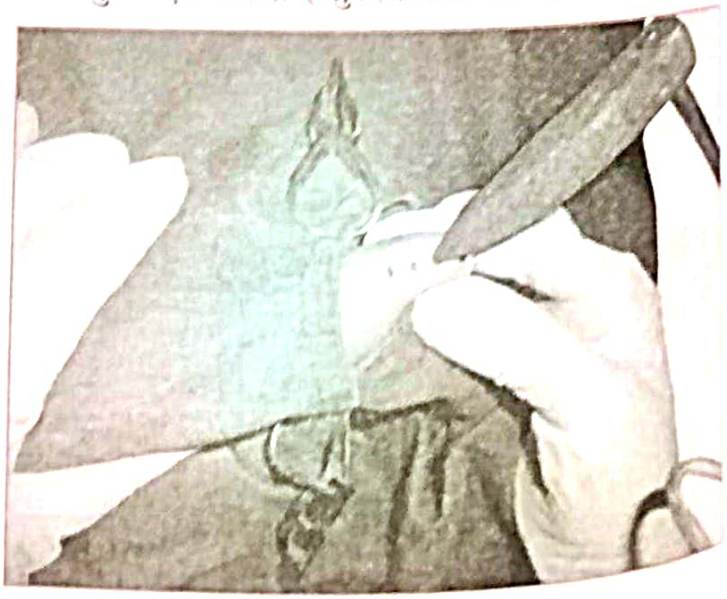

Fig. 10.6 : *Agnikarma* on little toe
(in painful condition)

दहन के योग्य व्याधियाँ (Indications)

1. त्वचा, मांस, सिरा, स्नायु, सन्धि एवं अस्थि में स्थित वात के कारण तीव्र वेदना में।
2. व्रण में मांस के ऊपर उठ जाने पर।
3. चेतनारहित मांसयुक्त व्रण।
4. ग्रन्थि
5. अर्श
6. अर्बुद
7. भगन्दर
8. अपची
9. श्लीपद
10. चर्मकील
11. तिलकालक

12. आन्त्रवृद्धि 13. संधिरोग
14. सिरावेध पश्चात् 15. छेदनादि कर्म पश्चात्
16. नाड़ी व्रण 16. रक्त के अतिस्राव में।

त्वङ्मांससिरास्नायुसन्ध्यस्थिस्थितेऽत्युग्ररुजिवायावुच्छ्रित-कठिनसुप्तमांसे व्रणे ग्रन्थ्यर्शोऽर्बुदभगन्दरापचीश्लीपदच-र्मकीलतिलकालकान्त्रवृद्धिसन्धिसिराच्छेदनादिषु नाडीशो-णितातिप्रवृत्तिषु चाग्निकर्म कुर्यात्। (सु.सू.12/10)

शिरोरोग तथा अधिमंथ में भ्रू, ललाट तथा शंखप्रदेश में अग्निकर्म करना चाहिए। वर्त्मगत रोगों में गीले वस्त्र से दृष्टिमण्डल को ढककर रोमकूप (बालों की जड़) में दग्ध करना चाहिए।

तत्र शिरोरोगाधिमन्थयोर्भ्रूललाटशङ्खप्रदेशेषु दहेत्, वर्त्मरोगे-ष्वार्द्रालक्तकप्रतिच्छन्नां दृष्टिं कृत्वा वकर्मरोमकूपान्।

(सु.सू. 12/9)

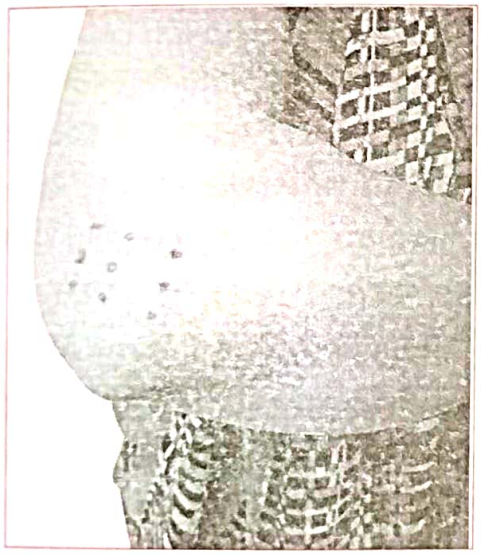

Fig. 10.7 : Agnikarma in tennis elbow.

अग्निकर्म के अयोग्य रोगी (Contra-indications)

1. पित्त प्रकृति
2. रक्तपित्त
3. अतिसार
4. जिनके शरीर से शल्य ना निकाला गया हो (retained foreign body)
5. दुर्बल 6. भीरू
7. बालक 8. वृद्ध
9. अनेक व्रणों से पीड़ित 10. स्वेदन के अयोग्य

अथेमानग्निना परिहरेत्-पित्तप्रकृतिभन्तः शोणितं भिन्नकोष्ठ-मनुदधृतशल्यं दुर्बलं बालं वृद्धं भीरुमनेकव्रणपीडित-मस्वेद्यांश्चेति। (सु.सू.12/14)

आचार्य चरक ने बालक, वृद्ध, दुर्बल, स्त्री, गर्भिणी, रक्तपित्त, तृष्णा, ज्वरपीड़ित, स्नायु और मर्मस्थान में होने वाले व्रणों में, विषयुक्त शल्य में, नेत्रगत व्रणों में एवं कुष्ठ व्रण में अग्निकर्म का निषेध कहा है। (च.चि. 25/105-106)

इतरथा दग्ध (Iatrogenic burn or burn due to negligence) : अग्निकर्म रोग के निवारणार्थ किया जाता है जिस हेतु शरीर के ऊतकों में दहन किया जाता है। अग्निकर्म व्रणाधिष्ठानों में आवश्यक गहराई तक किया जाता है, परन्तु कभी-कभी चिकित्सक की असावधानी (negligence) एवं दोषपूर्ण विधि (faulty technique) के द्वारा असामान्य दग्ध (abnormal burn) हो जाता है, इसे इतरथा दग्ध कहा जाता है। यह उल्लेखनीय है कि इस प्रकार का दग्ध व्रण चिकित्सक की उपस्थिति में उत्पन्न होता है।

आचार्य वाग्भट ने इसी इतरथा दग्ध को प्रमाददग्ध कहा है।

दग्ध के प्रकार (Types of burns)

(A) दग्ध के प्रकार (द्रव्य के अनुसार)

इतरथा दग्धलक्षणं वक्ष्यामः। तत्र, स्निग्धं रूक्षं वाऽऽश्रित्य द्रव्यमग्निर्दहति। (सु. सू. 12/15)

1. स्निग्ध दग्ध (Scald)

अग्निसन्तप्तो हि स्नेहः सूक्ष्मसिराऽनुसारित्वात्त्वगादीननु-प्रविश्याशु दहति। तस्मात् स्नेहदग्धेऽधिका रुजो भवन्ति।।

(सु. सू. 12/15)

अग्नि के द्वारा सन्तप्त हुए स्निग्ध पदार्थों में छोटी-छोटी सिराओं में प्रवेश करने की क्षमता होती है, जिससे वे त्वचा आदि में प्रवेश कर शीघ्र दहन करते हैं। अतः स्निग्ध दग्ध अधिक वेदनायुक्त होते हैं। जैसे—उष्ण सर्पि, तैल, जल आदि से दग्ध।

2. रूक्ष दग्ध (Ordinery burn)

तप्त घन पदार्थ/प्रत्यक्ष अग्नि के द्वारा होने वाले दग्ध को रूक्ष दग्ध कहते हैं।

(B) दग्ध के प्रकार (स्थानानुसार)

तत्र द्विविधमग्निकर्माहुरेके—त्वग्दग्धं, मांसदग्धञ्च।

(सु.सू. 12/7)

स्थान के अनुसार अग्निकर्म 2 प्रकार का होता है-

1. त्वग्दग्ध 2. मांसदग्ध

(C) दग्ध के प्रकार (लक्षणानुसार)

तत्र, प्लुष्टं दुर्दग्धं सम्यग्दग्धमतिदग्धं चेति चतुर्विधमग्नि-दग्धम्। (सु. सू. 12/16)

दग्ध के 4 प्रकार होते हैं :

1. प्लुष्ट 2. दुर्दग्ध 3. सम्यक् दग्ध 4. अतिदग्ध

1. प्लुष्ट दग्ध लक्षण

तत्र यद्विवर्णं प्लुष्यतेऽतिमात्रं तत् प्लुष्टम्। (सु. सू. 12/16)

जिस दग्ध में त्वक् वर्ण (skin colour) अतिमात्रा में विकृत हो जाता है तथा अत्यधिक दाह होता है, उसे प्लुष्ट दग्ध कहते हैं। आचार्य वाग्भट ने इसी प्लुष्ट दग्ध को तुत्थ दग्ध कहा है।

2. दुर्दग्ध लक्षण

यत्रोत्तिष्ठन्ति स्फोटास्तीव्राश्चोषदाहरागपाकवेदनाश्चिरा-च्चोपशाम्यन्ति तद् दुर्दग्धं।। (सु. सू. 12/16)

जिस दग्ध में तीव्र, भयंकर स्फोट (blisters), चोष, दाह, लालिमा, पाक, वेदना ये लक्षण दिखाई देते हैं, उसे दुर्दग्ध कहते हैं। यह लक्षण चिरात् (कुछ कालावधि के पश्चात्) शान्त होते हैं।

3. सम्यक् दग्ध लक्षण

सम्यग्दग्धमनवगाढं तालफलवर्णं सुसंस्थितं पूर्वलक्षणयुक्तं च। (सु. सू. 12/16)

जो दग्ध व्रण नाति गंभीर, ताल फल के वर्ण के सदृश, सुसंस्थित (समान) एवं पूर्वोक्त त्वचा, मांस, सिरा आदि के दाह लक्षणों से युक्त हो, उसे सम्यक् दग्ध कहते हैं।

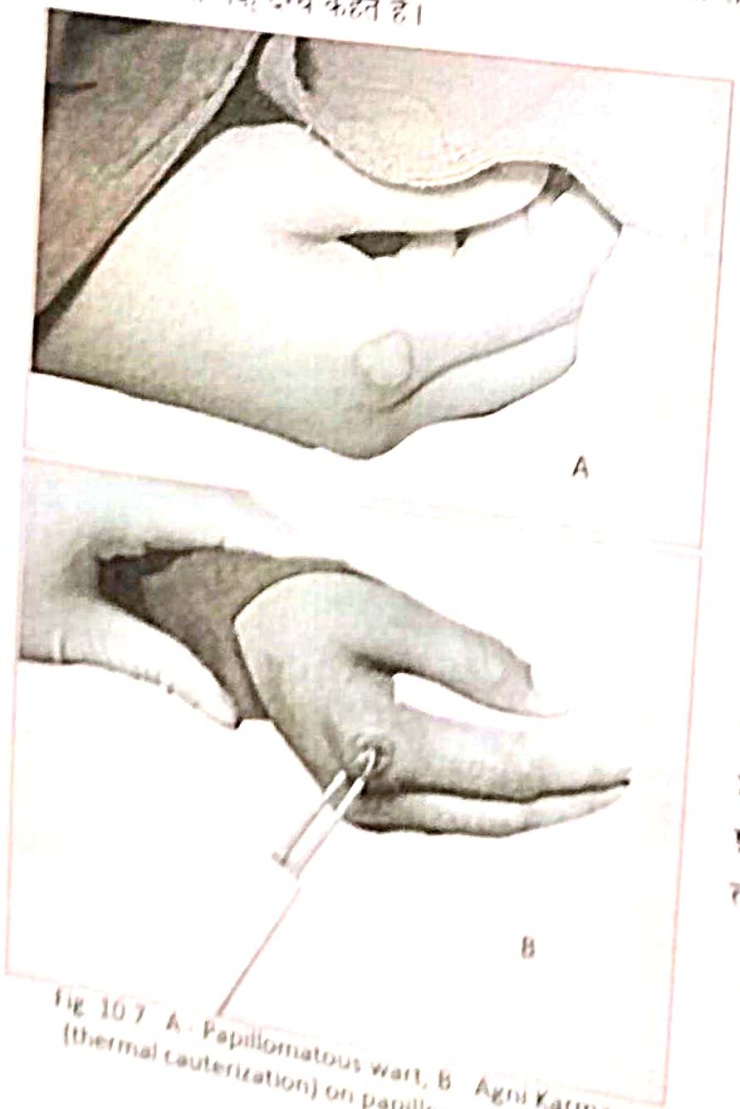

Fig 10.7 A : Papillomatous wart, B : Agni Karma (thermal cauterization) on papillomatous wart.

4. अतिदग्ध लक्षण

अतिदग्धे मांसावलम्बनं गात्रविश्लेषः सिरा... व्यापादनमतिमात्रं ज्वरदाहपिपासामूर्च्छाश्चोप... व्रणश्चास्य चिरेण रोहति रूढश्च विवर्णो भव...

(सु...

अतिदग्ध में मांस के टुकड़े लटके हुए दिखाई दे... अंगों अथवा संधियों का विश्लेष (dislocation) ... होता है। सिरा, स्नायु, सन्धि, अस्थि की अत्यधिक ... ज्वर, पिपासा, मूर्च्छा, दाह आदि उपद्रव उत्पन्न होते हैं ... के व्रणों का रोपण होने के लिए अधिक कालावधि की ... होती है। व्रणरोपण होने के पश्चात् भी वहाँ विवर्णता (d... ation) हो जाती है।

सम्प्राप्ति (Pathogenesis)

अग्निना कोपितं रक्तं भृशं जन्तोः प्रकुप्यति।
ततस्तेनैव वेगेन पित्तमस्याभ्युदीर्यते।।
तुल्यवीर्ये उभे ह्येते रसतो द्रव्यतस्तथा।
तेनास्य वेदनास्तीव्राः प्रकृत्या च विदह्यते।।
स्फोटाः शीघ्रं प्रजायन्ते ज्वरस्तृष्णा च वर्धते।।

(सु. सू. 12/...

अग्नि के कारण कुपित रक्त का प्रकोप होता है, परिणामस्वरूप पित्त का भी प्रकोप होता है, क्योंकि रक्त तथा पित्त समान ... होते हैं तथा रस और द्रव्य की दृष्टि से भी समानधर्मा होने से ... वेदनाएँ होती हैं, स्वाभाविक दाह होता है, शरीर पर ... स्फोटों का निर्माण होता है और रोगी ज्वर तथा तृष्णा से ... होता है।

चिकित्सा (Management)

1. प्लुष्ट दग्ध चिकित्सा

प्लुष्टस्याग्निप्रतपनं कार्य्यमुष्णं तथौषधम्।
शरीरे स्विन्नभूयिष्ठे स्विन्नं भवति शोणितम्।
प्रकृत्या ह्युदकं शीतं स्कन्दयत्यतिशोणितम्।।
तस्मात् सुखयति ह्युष्णं न तु शीतं कथञ्चन।

(सु. सू. 12/20, 2...

- प्लुष्ट दग्ध में उष्णोपचार करना चाहिए। इसमें दग्ध... को अग्नि की सहायता से गर्म किया जाता है।
- उष्ण बाह्य लेप तथा उष्णवीर्य आभ्यन्तर औषधि प्रयु... करनी चाहिए।

- व्रणप्रक्षालनार्थ एवं पानार्थ उष्ण जल का ही प्रयोग करना चाहिए।
- इस दग्ध के कारण शरीर स्विन्न हो जाता है, जिसके कारण रक्त भी स्विन्न हो जाता है। इस अवस्था में शीतोपचार करने पर रक्त का स्कन्दन होता है, अतः प्लुष्ट दग्ध में उष्णोपचार करना चाहिए।

2. दुर्दग्ध चिकित्सा

शीतामुष्णाञ्च दुर्दग्धे क्रियां कुर्याद् भिषक् पुनः।
घृतालेपनसेकास्तु शीतानेवास्य कारयेत्।। (सु. सू. 12/22)

दुर्दग्धवस्था में शीत एवं उष्ण इन दोनों प्रकार की चिकित्सा करनी चाहिए। तथापि घृत, आलेप तथा सेक का उपयोग शीत स्वरूप में ही करना चाहिए।

3. सम्यक् दग्ध चिकित्सा

सम्यग्दग्धे तुगाक्षीरीप्लक्षचन्दनगैरिकैः।
सामृतैः सर्पिषा स्निग्धैरालेपं कारयेद् भिषक्।।
ग्राम्यानूपौदकैश्चैनं पिष्टैर्मांसैः प्रलेपयेत्।
पित्तविद्रधिवच्चैनं सन्ततोष्माणमाचरेत्।।

(सु. सू. 12/23, 24)

- सम्यक् दग्ध में वंशलोचन, प्लक्षत्वक्, रक्तचंदन, गैरिक तथा गुडूची का सम्यक् चूर्ण करके उसमें घृत मिलाकर उसका आलेपन करना चाहिए।
- ग्राम्य (जैसे- घोड़ा आदि) एवं आनूप पशु (जैसे- वराह, कछुआ आदि) प्राणियों का मांस पीसकर उनका लेप करना चाहिए।
- यदि दग्धस्थान में अथवा सम्पूर्ण शरीर में दाह होता है तो **पित्तज विद्रधि** के समान चिकित्सा करनी चाहिए।

4. अतिदग्ध चिकित्सा

अतिदग्धे विशीर्णानि मांसान्युद्धृत्य शीतलाम्।
क्रियां कुर्याद् भिषक् पश्चाच्छालितण्डुलकण्डनैः।।
तिन्दुकीत्वक्कपालैर्वा घृतमिश्रैः प्रलेपयेत्।।
व्रणं गुडूचीपत्रैर्वा छादयेदथवोदकैः।
क्रियाञ्च निखिलां कुर्याद् भिषक् पित्तविसर्पवत्।।

(सु. सू. 12/25, 26)

अतिदग्धावस्था में निम्न प्रकार से चिकित्सा करनी चाहिए:

- दग्ध मांस निकाल देना चाहिए (Remove devitalized tissues)।
- दग्धस्थान पर शीतल उपचार करना चाहिए।
- तत्पश्चात् शाली चावल का चूर्ण अथवा तिन्दुक त्वक् क्वाथ में घृत मिलाकर प्रलेप करना चाहिए और व्रण को गुडूची पत्र अथवा कमल पत्र से आच्छादित करना चाहिए।
- **पित्तज विसर्प** के समान चिकित्सा करनी चाहिए।

सभी प्रकार के दग्ध हेतु रोपण घृत (Healing ointment)

मधूच्छिष्टं समधुकं रोध्रं सर्जरसं तथा।
मंजिष्ठां चंदनं मूर्वां पिष्ट्वा सर्पिर्विपाचयेत्।।
सर्वेषामग्निदग्धानामेतद्रोपणमुत्तमम्।

(सु. सू. 12/27, 28)

मोम, यष्टिमधु, लोध्र, राल, मंजिष्ठा, रक्तचन्दन तथा मूर्वा इन्हें पानी में पीसकर उनका कल्क करें। कल्क से चार गुना घृत और घृत से चार गुना पानी मिलाकर घृत पाक करें। यह घृत सभी प्रकार के अग्निदग्ध में उपयोगी रोपण घृत है।

स्नेहदग्धे क्रियां रूक्षां विशेषेणावचारयेत्।

(सु. सू. 12/28)

तैल, घृत आदि स्नेहों से दग्ध होने पर रूक्ष चिकित्सा करनी चाहिए।

धूमोपहत (Suffocation by smoke) लक्षण

अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि धूमोपहतलक्षणम्।
श्वसिति क्षौति चात्यर्थमप्याधमति कासते।।
चक्षुषोः परिदाहश्च रागश्चैवोपजायते।।
सधूमकं निश्वसिति घ्रेयमन्यन्न वेत्ति च।
तथैव च रसान् सर्वान् श्रुतिश्चास्योपहन्यते।।
तृष्णादाहज्वरयुतः सीदत्यथ च मूर्च्छति।
धूमोपहत इत्येषः, शृणु तस्य चिकित्सतम्।।

(सु.सू. 12/29-32)

धूमोपहत रोगी में प्रायः निम्नलिखित लक्षण दिखाई देते हैं-

- श्वसन क्रिया में उपद्रव, क्षवथु (छींक), आध्मान (tympanites), कास, नेत्र दाह तथा नेत्र में लालिमा दिखाई देती है।
- उच्छ्वास द्वारा धुआँ निकलता है अथवा श्वसन धूमगंधि होता है।
- धुँए के अतिरिक्त अन्य पदार्थों का गंधज्ञान नहीं होता है।
- रसज्ञान नष्ट हो जाता है तथा श्रवण शक्ति नष्ट हो जाती है।
- रोगी तृष्णा, दाह एवं ज्वर से पीड़ित होकर दुर्बल हो जाता है तथा मूर्च्छा उत्पन्न होती है।

धूमोपहत के द्वारा त्वचा के अतिरिक्त अन्य सभी चार ज्ञानेन्द्रियाँ प्रभावित होती हैं।

धूमोपहत चिकित्सा (Management)

1. वमन (Emesis)

सर्पिरिक्षुरसं द्राक्षां पयो वा शर्कराऽम्बु वा।
मधुराम्लौ रसौ वाऽपि वमनाय प्रदापयेत्।।
वमतः कोष्ठशुद्धिः स्याद् धूमगन्धश्च नश्यति।
विधिनाऽनेन शाम्यन्ति सदनक्षवथुज्वराः।।
दाहमूर्च्छातृडाध्मानश्वासकासश्च दारुणाः।

(सु. सू. 12/32-35)

- धूमोपहत के रोगी को सर्वप्रथम वमन करवाना चाहिए। वमन के लिए घृत, इक्षुरस, मुनक्का, दुग्ध, शर्करोदक (शरबत) अथवा मधुर एवं अम्ल रस एकत्र कर प्राशन करवाना चाहिए।
- वमन के कारण कोष्ठ शुद्धि होकर धूम्रगंध नष्ट हो जाती है।
- वमन के परिणामस्वरूप अंगग्लानि, क्षवथु, ज्वर शांत हो जाते हैं और दाह, मूर्च्छा, तृष्णा, आध्मान, दारुण श्वास, कास शान्त हो जाते हैं।

2. कवल ग्रह (Gargles)

मधुरैर्लवणाम्लैश्च कटुकैः कवलग्रहैः।
सम्यग्गृह्णातीन्द्रियार्थान् मनश्चास्य प्रसीदती।।

(सु. सू. 12/34)

मधुर, अम्ल, लवण एवं कटु रसात्मक द्रव्यों के स्वरस अथवा क्वाथ से कवलग्रह करने पर धूमोपहत रोगी विविध इंद्रियों के अर्थ (शब्द स्पर्शादि) को भली प्रकार से ग्रहण करने में समर्थ हो जाता है तथा मन निर्मल हो जाता है।

3. शिरोविरेचन (Errhines)

शिरोविरेचनं चास्मै दद्याद्योगेन शास्त्रवित्।
दृष्टिर्विशुध्यते चास्य शिरोग्रीवं च देहिनः।।

(सु. सू. 12/35)

शिरोविरेचन से रोगी की दृष्टि शुद्ध होती है, तथा सिर एवं गला साफ हो जाते हैं।

4. आहार (Diet)

अविदाहि लघु स्निग्धमाहारं चास्य कल्पयेत्।

(सु. सू. 12/36)

तत्पश्चात् रोगी को अविदाही, लघु एवं स्निग्ध आहार देना चाहिए।

धूमोपघाते वमनं क्षीरपानं तथोपरि।
जले च तरणं श्रेष्ठं धूमदाहोपशान्तये।।

हारीत संहिता तृतीय स्थान 58/13

आचार्य हारीत ने धूमोपहत की चिकित्सा हेतु वमन, क्षीरपान तथा जल में तैरना (swimming) आदि उपाय बताए हैं।

दग्ध प्रकार एवं चिकित्सा (कारणानुसार)

- **उष्णवातातपैर्दग्धे शीतः कार्यो विधिः सदा।**

(सु. सू. 12/37)

उष्ण वायु तथा तीव्र आतप (तेज धूप, लू अथवा sun stroke) इनसे दग्ध होने पर शीतोपचार करना चाहिए।

- **शीतवर्षानिलैर्दग्धे स्निग्धमुष्णं च शस्यते।**

(सु. सू. 12/37)

अत्यधिक शीत वर्षा तथा शीत वायु से युक्त दग्ध में उष्णोपचार तथा स्निग्धोपचार करना चाहिए।

- **अति तेजसा दग्धे सिद्धिर्नास्ति कथंचन।**
  इन्द्रवज्राग्निदग्धेऽपि जीवति प्रतिकारयेत्।
  स्नेहाभ्यंगपरीषेकैः प्रदेहैश्च तथा भिषक्।।

(सु. सू. 12/38)

इंद्रवज्र, विद्युत्पात (lightning) आदि प्रकार के दग्ध में विशेष सिद्धि (चिकित्सा लाभ) नहीं होती, क्योंकि प्रायः रोगी की मृत्यु हो जाती है। यदि रोगी जीवित रह जाता है तो स्नेह, अभ्यंग, परिषेक तथा प्रदेह के द्वारा उपचार करना चाहिए।

Currently Practising Methods of Agnikarma

- First of all, the patient is duly explained about the procedure and a written consent must be taken.
- Inj. Tetanus prophylaxis should be given I.M. before the procedure.
- Position of the patient should be manipulated according to the site on which agnikarma is going to be performed, e.g., prone in backache, supine in plantar corn, sitting or supine in tennis elbow, etc.
- The agnikarma shalaka is made red hot by heating on the gas burner. Nowadays a portable thermal cautery machine is being used which doesn't require a burner, coal, etc.